SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

वर्तमान उपन्यासों में नारी चेतना

अमित शुक्ला, (Ph. D.), हिंदी विभाग,
अनीता साकेत, हिंदी विभाग, एम. फिल., द्वितीय सेमेस्टर,
शा. ठाकुर रणमत सिंह, महाविद्यालय, रीवा, मध्यप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Authors
अमित शुक्ला, (Ph. D.), हिंदी विभाग,
अनीता साकेत, हिंदी विभाग,
एम. फिल., द्वितीय सेमेस्टर,
शा. ठाकुर रणमत सिंह, महाविद्यालय,
रीवा, मध्यप्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

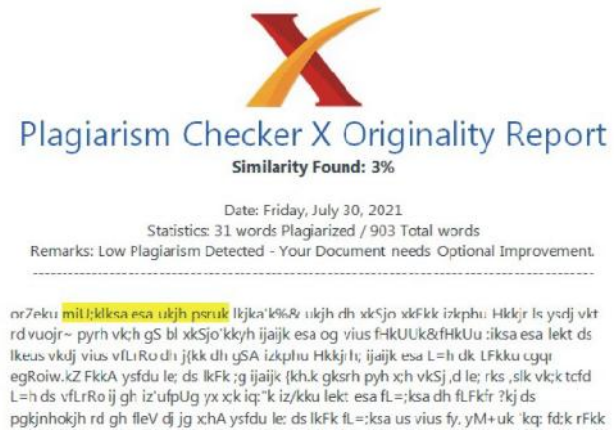

Received on : 29/07/2021
Revised on : -----
Accepted on : 05/08/2021
Plagiarism : 03% on 30/07/2021

शोध सार

नारी की गौरव गाथा प्राचीन भारत से लेकर आज तक अनवरत् चलती आयी है। इस गौरवशाली परंपरा में वह अपने भिन्न–भिन्न रूपों में समाज के सामने आकर अपने अस्तित्व की रक्षा करती है। प्राचीन भारतीय परंपरा में स्त्री का स्थान बहुत महत्वपूर्ण था। लेकिन समय के साथ यह परंपरा क्षीण होती चली गयी और एक समय तो ऐसा आया जबकि स्त्री के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लग गया। पुरूष प्रधान समाज में स्त्रियों की स्थिति घर के चाहारदीवारी तक ही सिमट कर रह गयी। लेकिन समय के साथ स्त्रियों ने अपने लिए लड़ना शुरू किया तथा अपने लेखनी के माध्यम से समाज में स्त्रियों पर हो रहे अत्याचारो को उजागर किया। इन स्त्रियों में चित्रा मुद्गल, कृष्णा सोबती, प्रभा खेतान, मन्नू भंडारी आदि ने अपने उपन्यासों, कहानियों के माध्यम से स्त्री मुक्ति का यथासंभाव प्रयास किया है।

मुख्य शब्द

सामाजिक व्यवस्था, अंधविश्वास, शोषक वर्ग, स्त्री, आन्दोलन, संवाद.

प्राचीन समाज में दलित स्त्री की भूमिका उन समाजो की व्यवस्थाओं के अनुरूप थी। इसका कारण यह है कि प्रत्येक समाज में शोषित वर्ग को स्वयं को उस समाज के शासक वर्ग तथा पुरूषों की आवश्यकताओं के अनुरूप ही ढ़ालना पड़ता है। परंतु अंग्रेजों के आने के बाद भारतीय समाज में कई प्रकार की हलचल पैदा हुई। राजनीतिक आर्थिक दमन और शोषित के साथ–साथ धार्मिक और नैतिक मापदंडों पर भी विदेशी शासकों का प्रहार होने लगा। नए औपनिवेशिक शासक अपने उपनिवेशी 'दमन' शोषण को 'असभ्य' लोगों को 'सभ्य' बनाने की जिम्मेदारी के नाम पर उचित ठहराने लगे। इसका तत्कालीन भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग ने प्रतिकार किया।

इस प्रतिकार के लिए उन्हें कड़ी मेहनत करनी पड़ी। अपने को पश्चिमी तर्ज पर सभ्य कहलाने के लिए पश्चिमी शिक्षा प्राप्त कर इन उदारवादी बुद्धिजीवियों ने उस समय की कुप्रथाओं के विरूद्ध आंदोलन छेड़ दिया।

नारीवादी आंदोलनों के इतिहास और वर्तमान स्वरूप के बावजूद भारत में स्त्री सम्बन्धी सामाजिक परिवर्तन की वास्तविकता का बोध स्त्री (रूपकुंवर जैसे) प्रकरण कराते है। सती प्रथा को हमारे स्त्री इतिहास का आत्मबलिदानी, गौररवशाली परंपरा का वारिस घोषित करते हुए इसके खिलाफ आवाज उठाने वालों को पश्चिम परंतु, उपनिवेशवादी प्रकारान्तर से पूंजीवादी विचारधारा का पोषक सिद्ध किया जाता रहा है। यह उस वक्त किया गया जब सती प्रथा को हत्या के अपराध के रूप में स्वीकृति मिलने लगी थी। देवराला में रूपकुंवर का सती होना सती होने की पहली घटना नहीं थी, परंतु रूप कुंवर प्रकरण इसलिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ क्योंकि इसमें सती समर्थकों के बाजारवादी मन्तव्यों को व्यक्त किया। सती मंदिर, सती स्मृति में मेलों का आयोजन के साथ ही सती होने के स्त्री के अधिकार हेतु आंदोलनों और 'सच्ची स्त्री' की प्रमाण पत्र देने की मंशा ने सती परंपरा पर विचार की आवश्यकता पैदा की।

रूप कुंवर प्रकरण के पूर्व पाली जिले के बांगड़ा गांव में पुलिस ने सती प्रथा के विपक्ष में अपना रोल अदा किया था। स्त्री के रूप में स्थापित की गई इस 'अच्छी स्त्री' की हत्या को समारोहित किया गया। आनन–फानन में सती स्थल को लोकप्रिय तीर्थस्थल में तब्दील करके और तीर्थस्थल बाजार में बदल गया। आंदोलनों में स्त्री भागीदारी बड़ी संख्या में थी और नारीवादियों पर असली भारतीय स्त्रियों के विरूद्ध घोषित करने का आरोप लगा।

स्त्री चिंतन पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध में गंभीर विचार का केंद्रीय मुद्दा रहा है, किंतु शुरूआती दौर में इस विषय पर लिखना वर्जना का शिकार रहा। एक ओर स्त्रीवाद की व्यवस्था व्यंजक छवि और दूसरे ध्रुव वर एकदम विपरीत इसे फैशनेबल शगल मानों जानो (जो अमीर औरतो का वक्त काटने का साधन था) ने स्त्री चिंतन के प्रति अपने दायित्व गंभीरता से नहीं निभाए।

स्त्री विषय पर वाद–विवाद और संवाद की संभावना को विदेशी आयात कहकर बार–बार खारिज किया जाता है। बावजूद इसके वक्त ने बता दिया कि भारत में स्त्री चिंतन की अपनी जमीन है और विवाद का यह अंकुरण अपनी धरती की छाती फोड़कर वृक्ष की कामना के साथ बड़ा हो रहा है।

निष्कर्ष

हिंदी में स्त्री चिंतन की परंपरागत दृष्टि से मुक्ति वाद, विवाद और संवाद की शुरूआत 'श्रृंखला की कड़ियाँ से मानी जाती है किंतु समकालीन स्त्री केंद्रित आलेखों पर विचार किया जाना भी जरूरी है। भारतीय संस्था के इतिहास पर विचार किया जाना भी जरूरी है। हिन्दी उपन्यासकार भारतीय संस्था के इतिहास पर विचार कर रहे थे, किंतु उनकी दृष्टि आने वाले वक्त की नब्ज पर लगातार जमी रही। स्त्री पर चिंतन का अबाध रस्म अस्सी के आसपास से देखने को मिलता है। उसमें से महत्वपूर्ण पुस्तकों के परिचय के माध्यम से स्त्री चिंतन पर उसके विविध आयामों पर वाद–विवाद, संवाद की गुंजाइश बन सकती है।

संदर्भ सूची

1. जोशी, गोपा, (2006), *''भारत में स्त्री असमानता एक विमर्श''*, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्करण, पृष्ठ संख्या 7।
2. कस्तवार, रेखा, (2006), *''स्त्री चिंतन की चुनौतियां''*, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण प्रथम, पृष्ठ संख्या 122।
3. कस्तवार, रेखा, (2006), *''स्त्री चिंतन की चुनौतियां''*, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण प्रथम, पृष्ठ संख्या 151।

****